ब्रह्म विद्या मार्गदर्शन, वराह उपनिषद, दिव्य भक्ति का स्वरुप.

ईश्वर के सगुन साकार रूप की भक्ति सबसे सुलभ, सरल व सबसे रसमयी है. इसे साकाम भक्ति भी कहते हैं और इस तरह सकाम भक्त को अर्थार्थी भक्त भी कहते हैं. अर्थार्थी का अर्थ है, कि भक्त को जो भी चाहिए होता है, वह केवल अपने प्रभु, अपने स्वामी, अपने परमपिता स्वरुप अपने भगवान् से ही मांगता है. उसी के सामने वह अपने ह्रदय की बात करता है. यह सम्बन्ध इतना अबोध व भोला भाला है कि अक्सर जब भी भक्त किसी भक्ति भजन व कथा को सुन रहा होता है तो वह इतना आनंदित हो जाता है कि वह न तो कुछ सोच पाता है न कुछ कर पता है. उसकी आखों से आनंद और दुख का सागर अश्रुओं के रूप में बह निकलता है, चाह कर भी वह भक्त उस महासागर को रोक नहीं पाता. उसका मन, उसके अपने जीवन की कथा और व्यथा का सारा वर्णन, पश्यन्ति भाषा में ईश्वर से कर देता है. पश्यन्ति भाषा बहुतशक्तिशाली, प्रभावकारी और बहुततीव्र होती है, कि इस जगत का सारा ज्ञान, एक क्षण के सहस्त्रवे से सहस्त्रवे हिस्से में इस भाषा से बताया जा सकता है.

पश्यन्ति भाषा हमारे मन और चित्त के मध्य प्रयुक्त होने वाली भाषा है. इसका हल्का सा साक्ष्य, इस तथ्य से मिल जाता है कि, यदि हम अपने आज तक के जीवन को देखना चाहें, तो केवल इस बात को सोचते ही, हमारा सारा पिछला जीवन, एक पल में ही हमारे मन के पटल पर एक चलचित्र की भाँती लहरा जाता है और पूरा भी हो जाता है. यदि कोई हमसे हमारे बच्चों का नाम पूछे, तो हम नाम लेना सोचें, नाम बोलना शुरू करें और नाम का शब्द समाप्त हो, इसी बीच उस हर बच्चे, जिसका भी नाम लेंगे, उसका, जब से वह आपके पास आया, वह जनमा और अब तक के जीवन को, आपका मन चलचित्र की भाँती आपको दिखा भी देता है. यही भाषा पश्यन्ति भाषा कहलाती है और सर्वव्यापी व हर जीव के अंदर बैठे हुएईश्वर, इसी भाषा में जीव की सारी कथा व व्यथा देख सुन लेते हैं. यह भाषा ब्रह्माण्ड, ग्रह. देश, काल आदि से स्वतंत्र है अर्थात उससे बंधी हुईनहीं है, अर्थात इस भाषा पर किसी भी सांसारिक भाषा के ज्ञान का बंधन नहीं है.

भक्त का मन उसे बहुतछलता है, यदि भक्त कोई पुराण, उपनिषद आदि का अध्ययन करना प्रारम्भ करे तो, उस भक्त का मन उसे धकेलता रहता है कि, वह उस ग्रन्थ में यह ढूंढे कि, कौन सा मन्त्र मैं बोलूं, कि भगवान् प्रसन्न हो कर अपना ध्यान मुझ पर लगाए और मेरे कष्ट हरें. मुझे सुख मिले, मुझे वैभव की प्राप्ति हो. भक्त के ऐसे मन का कोई दोष नहीं, वह नितांत अबोध और भोला होता है, इस दुखालयरुपी संसार में, शांति सबसे बड़ी प्राथमिकता है. तभी ईश्वर भी शांति व धर्म की स्थापना के लिए स्वयं, हर युग में अवतरित होते हैं.

सभी साकाम भक्त प्रभु के रूप की भक्ति के भक्त अनंत सुख सागर में डूब कर, उनके प्रेम में लीन रहते हैं. कुछ भक्त प्रभु के सभी रूपों की उपासना करते हैं, तो कई भक्त ईश्वर के किसी एक रूप के साथ अपने मन को बाँध देते हैं. सभी भक्तो की अपनी अपनी भक्ति है, और सभी भक्तो का भक्ति के स्वरुप का ज्ञान भी भिन्न भिन्न है. किसी को अपने भगवान् पर पुष्प अर्पण कर बहुत आनंद मिलता है,

कोई भगवान् को जल चढ़ा कर अपने को कृतार्थ समझता है. कोई अपने बनाये भोजन को प्रभु को चढ़ाता है फिर स्वयं खाता है, तो कोई हर निवाले में ईश्वर को याद कर उनको बार बार नमन करता है. मुख्य लक्ष्य सभी का अपने प्रभु की प्रसन्नता और उनकी दया की प्राप्ति है और यही भक्ति कहलाती है.

हर भक्त अपनी तरह से अपने प्रभु का ज्ञान, भजन, कथा, आदि भी सीखता है और जब भी मौका मिलता है, इसका प्रदर्शन भी करता है. उसका लक्ष्य, हर पल अपने प्रभु का गुणगान कर, उनको ही प्रसन्न करना होता है. सभी भक्तों को अपने भगवान् के साकार रूप का ज्ञान होता है और उसे ईश्वर के रूपों, ईश्वर के कथाओं और ईश्वर के भजन आदि का भी ज्ञान और अभ्यास होता है. अधिकतर आचार्य व प्रवचन कर्ता, जो ईश्वर के रूपों के गुणगान का प्रवचन आदि करते हैं, वह अर्थार्थी की श्रेणी में ही आते हैं.   वे जन साधारण में ईश्वर की भक्ति का प्रचार कर, सभी को ईश्वर के बारे में ज्ञान देते हैं और जन मानस को दुखों से छुटकारा दिलाने और ईश्वर के प्रति रूचि बढ़ाने में उनका ही सबसे बड़ा योगदान है. समाज पर सभी आचार्य और प्रचारकों का बहुत आभार है.

इस संसार में जितने भी उल्लास पूर्ण मेले, त्यौहार, व्रत, पूजा , तीरथ, दान, भजन, आदि जो भी रंगमय, आनंदमय क्रिया आदि है, उन सभी का आधार वह सब साकाम भक्त और उनकी भक्ति ही है. भक्त इतना भोला होता है कि, भक्त अपने भगवान् के नाम पर, उनको प्रसन्न करने के लिए कई दिन तक अन्न जल से दूर रह सकता है, अपना सब कुछ दान दे कर संसार में इधर उधर भटक सकता है. कोई उसे बोले की १००० किलोमीटर पैदल बिना पादुका के चल कर किसी विशेष मंदिर जाओ, तो भगवान् प्रसन्न हो जाएंगे, तो वह एक पल भी नहीं लगाएगा और तत्काल यात्रा शुरू कर देगा. भक्त इस सीमा तक भक्ति में लीन हो जाता है कि उसे हर ठूंठ हर जगह ईश्वर की झलक मिल जाती है. भक्त शिरोमणि श्री चैतन्य महाप्रभु भक्ति में इतनी लीन हो गए कि, उनको सागर का नीला जल भी कृष्ण रूप दिखाई देने लगा और वही सुध बुध खो कर सागर में ही लीन हो गए.

सकाम भक्ति बहुत नियमों परम्पराओं आदि से बंधी होती है, और भोले भाले भक्त बहुत निष्ठा से इन नियमों का पालन करते हैं. जैसे कभी बाएं चरण को पहले नहीं आगे रखेंगे आदि, यदि कोई नियम, गलती से, टूट जाए तो प्रायश्चित रूप दान, कई दिन व्रत, जप, गुरु सेवा, मंदिर प्रांगण की सफाई आदि करेंगे. इसलिए सकाम भक्ति अनंत तरह, अनंत रूपों, अनंत तरह के नियमों से भरी हुई है. जितने मठ, सम्प्रदाय आदि सकाम भक्ति में हैं, उससे कहीं ज्यादा सम्प्रदाय मानव चिंतन में हैं. अर्थात मुंडे मुंडे मतिर भिन्नाह , जितने सिर व शरीर उतनी ही तरह के मत, नियम और प्रथाएं संभव है.

भगवान् भी अपने, इन भोले भाले, भक्तों के आधीन रहते हैं, श्रीमद भागवत में ईश्वर ने स्वयं कहा है, मैं भक्तों के वश में हूँ, जहाँ जहाँ मेरा भक्त जाता है, उसके पीछे पीछे मैं चलता हूँ, ताकि उसके छाया

और चलने पर उड़ने वाली धूल से मुझे भी पवित्रता मिले. ईश्वर यह बता रहे हैं कि, जब भी कोई तीर्थ आदि जाता है, तो वह मुझे अपने हृदय में दृढ़ता से बिठा लेता है. वह केवल मेरा ही स्मरण कर मुझे प्रसन्न करने के लिए भिन्न कार्य भी, जैसे दान, भजन, कीर्तन, नृत्य, भोजन के भंडारे, चिकित्सा व् औषधि दान आदि, और वह मेरे नाम को जन मानस के हृदय में उतार देते हैं. मैं भी अपने भक्त का कभी बुरा या हानि नहीं होने देता, वह मेरे संरक्षण में रहता है, मैं उनके कुशल क्षेम की भी रक्षा करता हूँ, और जो उन्होंने एक जन्म में अर्जित कर लिया है, वह भक्त के अगले जन्म के लिए भी ले जा कर उसे दे देता हूँ.

यहां भगवान् बता रहे हैं, कि जो इस जन्म में अर्जित कर लिया है, यहां अर्जित का अर्थ धन, वैभव, राज्य, सम्पदा, भवन, प्रख्याति, पद, सांसारिक ज्ञान जैसे कला, साहित्य, अर्थशास्त्र, विज्ञानं आदि, स्त्री, पुत्र आदि जो भी इस जन्म में संसार में अर्जित किये हैं, वह नहीं है. यह सब इस देह के साथ जुड़े हैं, देह के साथ ही इसी जगत में रह जाएंगे. ईश्वर इस जड़ माया जनित व संग्रहित वस्तुओं की रक्षा नहीं करते, ईश्वर उस ज्ञान की रक्षा करते हैं, जो इस जगत से नहीं जुड़ा है, जैसे प्रेम भक्ति, ईश्वर का ज्ञान, अभ्यास सहित तीव्र इच्छाएं, कर्म आदि. वही ईश्वर द्वारा रक्षित होता है.

भक्त का मोह, इस संसार से नहीं छूट पाता, इसलिए वह सकाम भक्ति में लीन रहते हुए, प्रभु से अपने तात्कालिक दुख की निवृत्ति की प्रार्थना करता है. प्रभु की माया भी कम छलिया नहीं है, वह भी प्रभु के सकाम भक्तो से पूरा आनंद लेती हैं, उनको एक दुख से हटा कर दूसरे दुख में डाल देती हैं. माया के पास तो ईश्वर की शक्ति है, इसलिए वह किसी भी मौके को अपने हाथ से नहीं जाने देती, और भक्त के पास केवल अपनी स्वामिभक्ति है, जो उसको माया के छल से बचाती रहती है.

ईश्वर ने प्रभु वराह के रूप में आकर, अपने भक्त को सकाम भक्ति से आगे बढ़ते हुए, उस भक्ति का ज्ञान दिया. उन्होंने बताया कि सभी भक्त मुझे बहुत प्रिय हैं, उनकी भक्ति पर मैं रीझा रहता हूँ, लेकिन भक्ति के उस दिव्य स्वरुप से में तत्काल प्रसन्न हो जाता हूँ, यही भक्ति, भक्त के हृदय में , मुझे दिव्य रूप में स्थिर कर देती है और मैं अपने ऐसे भक्त को अपने पास ही रखता हूँ, जैसे एक लोभी अपनी तिजोरी की चाबी अपने पास रखता है.

इस भक्ति को जानने के से पहले एक कथा प्रस्तुत है , ताकि जो भक्ति ईश्वर बता रहे हैं, वह थोड़ा साफ़ से या बिना किसी त्रुटि के समझ आ जाए.

एक बार एक बड़े राज्य में बहुत दयालु, शांतिप्रिय, न्यायप्रिय और शांत राजा शासन करता था. वह सभी का उनकी प्रवृत्ति, ज्ञान व कौशल के अनुसार उनको अलग अलग काम देता. सभी कर्मचारियों का अपने बंधू की तरह ध्यान देता था, और स्वयं देखता कि गलती से भी किसी को कुछ कमी तो नहीं हो रही.

उसने इस प्रबंध के लिए एक छोटा सा दल भी बनाया हु आ था, वह दल सभी के घर अन्न, जल, फल आदि का प्रबंध करता था, और वेतन के लिए लेखा विभाग था.

एक बार एक, उद्यान वाटिका, कर्मचारी ने देखा कि उसके कुछ साथी तो राजा के बहु त प्रिय हैं, कुछ राजा के व्यक्तिगत कार्य के लिए नियुक्त हैं, कुछ का काम केवल नाचना गाना है, कुछ को राजा ने अपने राज्य के बाहर की दीवार को साफ़ करने का काम दिया है, आदि आदि. वह भोला भाला कर्मचारी राजा को प्रसन्न करने की कामना से, कभी अपने घर से गेहूं ला कर राजा को उपहार देता, कभी कोई फल लाकर देता, कभी कोई अच्छी सी कविता सुनाने की कोशिश करता. राजा भी उसके भोलेपन पर मुस्कुरा देते और उसे अपना कार्य ध्यान पूर्वक करने का उपदेश देते.

एक बार राजा अपने प्रिय मंत्री के साथ उद्यान में टहलने गया, वहाँ वही कर्मचारी पौधों की छटाई कर रहा था. वह दौड़ा दौड़ा अपने प्रभु अपने राजा के सामने आ कर उनको नमन किया. राजा ने उसके नमन को स्वीकार किया और मुस्कुराते हु ए उसकी कुशल मंगल पूछी.

माली ने राजा का आभार प्रकट किया और वही खड़ा रहा. राजा को लगा कि माली ने अपने मन के बात उससे करना चाहता है, इस विचार से राजा ने पूछा कहो क्या कहना चाहते हो? माली ने विनम्र हो कर कहा, प्रभु मैं केवल आपकी प्रसन्नता चाहता हूँ. राजा ने बोला, मैं सभी से बहु त प्रसन्न हूँ, जो भी यहां मेरे साथ है अथवा जो भी बाहर काम कर रहे हैं, सभी मेरे बहु त प्रिय हैं. माली अब भी वहीँ खड़ा था, राजा मुस्कुराने लगे, उन्होने फिर पूछा, कुछ मन में कोई बात है, तो बोलो. अब माली को थोड़ी हिम्मत आयी और उसने अपना सर राजा के चरणों में रखते हु ए पूछा, मैं आपको क्या भेंट दूँ, कि आप प्रसन्न हो जाएँ.

सुनते ही राजा जोर से हंस पड़े. और अपने मंत्री को उस भोले भाले माली के प्रश्न का जवाब देने को कहा. मंत्री भी बहु त सहृदय था, उसने माली को बोला, भाई, जो भी तेरे पास है, अन्न, जल, फल, फूल, सब महाराज ने ही तो तुझे दिया है. तुम उसी में से भेंट ला कर महाराज को उपहार स्वरुप देते हो, सभी सभा में बैठे लोग हँसते है. महाराज तो वैसे ही प्रसन्न हैं. यदि तुम्हारे मन में उनको सच में प्रसन्न करने कि इच्छा है तो वह सब मत दो, जो स्वयं राजा ने तुमको दिया है. तुम अपना कर्म, अपनी अटूट निष्ठा दो, वही अनमोल है और महाराज को बहु त पसंद भी है. यह ज्ञान दे कर मंत्री राजा जी की तरफ चल पड़े और माली विचार कर रहा था कि मंत्री जी क्या बता रहे थे, उसका अर्थ कैसे पता चलेगा, जो मंत्री जी ने बताया है. मैं तो वही दे सकता हूँ जो मेरे पास है.

वराह उपनिषद, प्रथम अध्याय.

एक बार महामुनि ऋभु अपने देवताओं के बारह वर्ष प्रयन्त तपश्चर्या की। तपस्या के अंत में भगवान् वराह रूप में प्रकट हु ए। वराह भगवान् , महामुनि ऋभु से बोले - उठो महामुने उठो बोलो क्या चाहते हो? ऋभु जी उठ खड़े हु ए और

प्रभु को प्रणाम कर के बोले, भगवान् कामी लोग जिसकी कामना करते हैं, ऐसे तुच्छ भोग पदार्थों की मैं आपसे याचना कैसे कर सकता हूँ.

समस्त , वेद, शास्त्र , इतिहास , और पुराण अन्य सब कठिन विद्याएं तथा ब्रम्हा आदि देव गण भी कहते हैं कि, आपके दिव्य स्वरुप के ज्ञान से जीव मुक्ति होती है. इसलिए आप अपने दिव्य स्वरुप का प्रतिपादन करने वाली ब्रह्मविद्या का मुझे उपदेश दीजिये .

तब वराह रूपधारी भगवान ने महामुनि ऋभु को बहुतगंभीर स्वर में कहा, बिना देह के भक्ति नहीं हो सकती, बिना ज्ञान के भी भक्ति नहीं हो सकती. संसार में, केवल संसार का ही ज्ञान, उपलब्ध हो सकता है. और देह केवल वही ज्ञान ले सकती है, जो वह अनुभव कर सकती है. यह जड़ देह मेरे द्वारा ही निर्मित है और मैं ही इस देह को, जीव के कर्मो के अनुसार, जीव को, प्रारब्ध सहित, उसके हर जन्म में देता हूँ. मैं हर जगह, हर लोक, हर समय उसके साथ ही रहता हूँ.

जिस भक्ति से मैं प्रसन्न होता हूँ, वह भक्ति भी इसी देह से ही हो सकती है, लेकिन बिना सूक्ष्म ज्ञान के यह भक्ति जानी नहीं जा सकती.

अब मैं उस भक्ति के बारे में बताता हूँ, जिसकी मुझे, अपने भक्त से, आशा रहती है, जिसकी मैं प्रतीक्षा करता हूँ, और यदि वह भक्ति मुझे मिल जाए तो मैं तुरंत ही प्रसन्न हो जाता हूँ.
हे महामुने ऋभु तुम सावधान हो कर मेरे वचन सुनो.

यह देह सूक्ष्म और स्थूल तत्त्वों से बनी है. और इसमें सिवाय जड़ माया के और कुछ नहीं है. कुछ ज्ञानी इसमें २४ तत्त्व बताते हैं, कुछ ज्ञानी इसमें ३६ तत्त्व बताते हैं और कुछ ज्ञानी इसमें ९६ तत्त्व बताते हैं. मैं तुमको सभी तत्त्वों के बारे में बताता हूँ.

हर देह में पाँच ज्ञाननेंद्रिया हैं, अर्थात् प्रकृति में सुनने के लिए, श्रोत, प्रकृति के अनुभव के लिए त्वचा, प्रकृति में देखने के लिए चक्षु, प्रकृति में रस स्वाद आदि के लिए रसना और प्रकृति में सुगंधों के अनुभव के लिए घ्राण इंद्री.

हर देह में पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं, अर्थात् बोलने के लिए वाक्, चलने के लिए पाद, व्यापर व् कर्म करने हेतु पानी, मल त्याग हेतु पायु और प्रजननं हेतु उपस्थ इंद्री.

हर देह में पाँच प्राण पाँच हैं, अर्थात (१). प्राण वायु यह श्वास-प्रश्वास क्रिया का करती है. (२). अपान वायु , शरीर के अंदर से शुध्दि करती है. (३). समान वायु, जीव के खाये पिए पदार्थ को पचने और उसके तत्वों को पूरे शरीर रख रखाव व निर्माण के लिए. (४). उदान वायु, सारे शरीर में फैला कर सभी जगह प्राण को बनाये रखने के लिए. (५). व्यान वायु, शरीर में रक्त आदि का संचार करने के लिए.

हर देह में चार अंतरचतुष्ठय होते हैं, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार.

यह कुछ मिला कर १९ तत्व हुए और ब्रह्म को मानने वाले ज्ञानी इन्ही १९ तत्वों की जानकारी व इन्ही पर निष्ठा रखते हैं.

हर देह में पांच महा भूतों, अर्थात पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश.

हर देह में तीन शरीर हुए, अर्थात जो दृश्यमान है स्थूल शरीर, जो स्थूल शरीर को नियंत्रित करता है सूक्ष्म शरीर और जिस शरीर से इन दोनों शरीरों की उत्पत्ति हुई अर्थात कारण शरीर.

हर देह में तीन लोक अथवा अवस्थाये हैं, अर्थात जो दृशयमान जगत है, जाग्रति लोक, जो केवल जीव को दृशयमान है, अर्थात स्वपन व इच्छा का, स्वप्न लोक, जो संसार और मन रहित, कारण शरीर का लोक है, सुषुप्ति लोक.

हर देह में छह विकार हैं. देह का जन्म लेना, देह का दिखाई पड़ना, समय अनुसार देह की वृद्धि होना अथवा बढ़ना, लगातार परिवर्तित होना, समय अनुसार देह का कमजोर व वृद्ध हो जाना, और देह का विनाश अथवा नष्ट हो जाना.

ज्ञानी मुनि, जीव सहित इन छत्तीस तत्वों को जान कर इसे माया का अंश मानते हैं और इसके अतिरिक्त जो बचा वह ईश्वर तत्व है.

हर देह की छह उर्मियाँ अथवा दुर्बलताये हैं. हर देह को भूख, प्यास, शोक, मोह, बुढ़ापा और मृत्यु प्राप्त होती है.

हर देह की छह धातुऐं हैं, त्वचा, रक्त, मांस, मेद, मज्जा और अस्थि.

हर देह के छह शत्रु हैं. काम, क्रोध, लोभ, मोह, मान और द्वेष.

हर देह के तीन प्रकार के जीव अथवा रूप हैं, जो विश्व में दिखाई पड़ता है वह विश्व, जो मन में दिखाई पड़ता है तैजस और जो इन सबसे परे ईश्वर का अंश प्रज्ञा.

हर देह के साथ तीन गुण है. जो सम्मुख है, सत्वगुण, जो महसूस होता है (दुख आदि), रजसगुण और जो हमें सत्य से दूर रखता है, तमसगुण.
हर देह के तीन कर्म हैं. प्रारब्ध, संचित और आगमिन अर्थात क्रियमानी.

हर देह की कर्मेन्द्रियों की पांच क्रियाएं हैं, बोलना, उठाना, चलना, मलत्याग और सहवास भोगना.

हर देह के चार अंतःकर्म हैं संकल्प अध्यवसान अथवा विकल्प अभिमान और स्मृति.
हर देह के चार चतुष्ट्यं हैं मुदित, करुणा, मैत्री और उपेक्षा .
हर देह के चार अंतःकर्म हैं संकल्प अध्यवसान अथवा विकल्प, अभिमान और स्मृति.
हर देह के चार चतुष्ट्यं हैं मुदित, करुणा, मैत्री और उपेक्षा .

हर देह के १४ देवता हैं, दिक् अथवा दिशा, वायु, सूर्य, वरुण, अश्विनी देव, अग्नि, इन्द्र, उपेन्द्र और मृत्यु चन्द्रमा, चतुर्मुख ब्रह्मा, रुद्र, क्षेत्रज्ञ और ईश्वर.

इस प्रकार ये छियानवे तत्त्व हैं, जो भी जिस भी गृह अथवा ब्रह्माण्ड का देह धारी प्रज्ञावान जीव अर्थात इस जगत में मनुष्य भक्ति पूर्वक मुझ वराह रूपी को, जो इन ९६ तत्त्वों के समुच्चय से भिन्न और क्षय रहित है अर्थात यह सब तत्त्व मुझमे नहीं है, मेरा रूप इस सबसे अलग है. वे मेरे उस रूप के ज्ञान को समझ कर उसे भजने में, अथवा ध्यान करने में समर्थ हो जाते हैं. वे देहधारी जीव, हर तरह के अज्ञान और माया के प्रभावों से मुक्त हो जाते हैं और पूरी तरह से जीवन्मुक्त हो जाते हैं।

जिन जीवों को इन छियानवे तत्त्वों का ज्ञान हो गया है, और वे इन तत्त्वों को ठीक से पहचान व इनका ध्यान कर सकते हैं और इनको जानते हैं, वे किसी भी योनि में हों, किसी भी सम्प्रदाय से हों, किसी भी आश्रम में हों, किसी भी तरह के योग व हटयोग व संन्यास में हों, अथवा महा जटायुक्त हों, या जटा

हीन हों, शिखादारी हों या घुटमुंड हों, स्त्री हों या नर हों, उनको किसी ना किसी रूप में मोक्ष प्राप्ति निश्चित है.

महा मुनि श्रृंगी को यह ज्ञान देकर प्रभु वराह जी, ने महामुनि को आशीर्वचन कहे और महामुनि कृत कृत हो कर बार बार प्रभु की इस कृपा से धन्य हो गए.